Anusandhanvallari
Vol 2024, No.1
December 2024
ISSN 2229-3388

भारतीय ज्ञान-परम्परा में शिवत्व का अन्तःसम्बन्ध

Dr. Swasti Sharma
Senior Consultant
Program Office
National Syllabus and Teaching Learning Material Committee (NSTC)
National Council of Educational Research and Training (NCERT)

प्रस्तावना

ज्ञान-परम्परा मुख्य रूप से दो परम्पराओं के माध्यम से विशेषतया विकसित हुई है- आगम-परम्परा एवं निगम-परम्परा। जिस प्रकार वैदिक परम्परा के सिद्धान्तों का आचार आदि को प्रसृत करने में महत्त्वपूर्ण स्थान है, उसी प्रकार ही आगम-परम्परा भी भारतीय ज्ञान एवं आचार आदि विषयों का मुख्य स्रोत है। ये दोनों परम्पराएँ सिद्धान्त एवं साधना को एक साथ प्रवाहित करती हैं। नैगमिक अर्थात् वैदिक सिद्धान्त एवं साधना के मूल में 'वेद' हैं और आगमिक अथवा तान्त्रिक सिद्धान्त एवं साधना के उद्गम के रूप में 'तन्त्र' हैं। पौराणिक काल में शैव-धर्म की उत्पत्ति का मूल आगम हैं।

वस्तुतः इस 'तन्त्र' शब्द के अर्थ की विशिष्टता है कि इसका अध्याहार न केवल विभिन्न भारतीय शास्त्र-परम्पराओं में ही किया गया है अपितु आधुनिक ग्रन्थों (समाजशास्त्र, विज्ञान आदि) में भी अनेक स्थलों पर किसी समन्वयात्मक या सैद्धान्तिक अर्थ को प्रकट करने हेतु इसका प्रयोग किया गया है, यथा- ज्ञान-तन्त्र, व्याकरण-तन्त्र, अगद-तन्त्र, रसायन-तन्त्र, प्रजातन्त्र, लोकतन्त्र, जनतन्त्र, पाचन-तन्त्र, प्रजननतन्त्र इत्यादि।

इस शब्द से सम्बन्धित दार्शनिक अर्थ का बोध न होने के कारण समाज में दीर्घकाल से इसका भ्रामक अर्थ चला आ रहा है जिसका अर्थ जादू-टोना इस रूप में समझा जाता है। जबकि यह एक सम्पूर्ण अर्थ का बोधक है। जिसे अंगेजी में सिस्टम कहा जा सकता है। 'तन्त्र' शब्द का विशेष अर्थ है- 'परमशिव' का स्वेच्छया अपने स्वातन्त्र्य से अपने को संकुचित कर जड-चेतन के रूप में स्फुरित होना, पुनः स्वोपायों के द्वारा अपने को इस संकोच को हटा कर स्वयं को अपने विस्तृत या पूर्णरूप में स्वस्थ करना है। परमशिव के विश्वरूप में स्फुरित और फिर अपने रूप में स्वस्थ होने की प्रक्रिया ही तन्त्रशास्त्र का प्रतिपाद्य विषय है। इस प्रकार तन्त्र साक्षात्कार की एक विशेष व्यवस्था है, यह कहा जा सकता है।

वैदिक सन्दर्भ

निगम में शिव के रुद्र-स्वरूप का वर्णन समुपलब्ध होता है। ऋग्वेद में रुद्र की स्तुति में पूर्ण रूप से तीन सूक्त प्राप्त होते हैं।[1] किन्हीं सूक्तों में शिव की अन्य देवताओं के साथ सम्मिलित रूप से स्तुति की गई है, यथा एक सूक्त में रुद्र और सोम की एकत्र स्तुति की गई है-

सोमारुद्रा धारयेथामसुर्यं१ प्र वामिष्टयोऽरमश्नुवन्तु।
दमेदमे सप्त रत्ना दधाना शं नो भूतं द्विपदे शं चतुष्पदे॥[2]

[1] ऋग्वेद, 1/114, 2/33, 7/46

[2] ऋग्वेद, 6/74

वेदों में रुद्र आयुधधारी भी हैं और इस स्वरूप में वे संहार करते हैं तथा दूसरी ओर सहस्रों मंगल करने वाली औषधियाँ भी रखते हैं-

इ॒मा रु॒द्राय॑ स्थि॒रध॑न्वने॒ गिर॑: क्षि॒प्रेष॑वे दे॒वाय॑ स्व॒धाव॑ने ।
अषा॑ळ्हाय॒ सह॑मानाय वे॒धसे॑ ति॒ग्मायु॑धाय भरता शृ॒णोतु॑ नः ॥
स हि क्षये॑ण॒ क्षम्य॑स्य॒ जन्म॑न॒: सामा॑ज्येन दि॒व्यस्य॒ चेत॑ति ।
अव॒न्नव॑न्तीरुप॑ नो॒ दुर॑श्चरानमी॒वो रु॑द्र॒ जासु॑ नो भव ॥
या ते॑ दि॒द्युदव॑सृष्टा दि॒वस्परि॑ क्ष्म॒या चर॑ति॒ परि॒ सा वृ॑णक्तु नः ।
स॒हस्र॑ ते स्वपिवात भेष॒जा मा न॑स्तो॒केषु॒ तन॑येषु रीरिषः ॥
मा नो॑ वधी रुद्र॒ मा परा॑ दा॒ मा ते॑ भू॒म॒ प्रसि॑तौ हीळि॒तस्य॑ ।
आ नो॑ भज ब॒र्हिषि॑ जीवशं॒से यू॒यं पा॑त स्व॒स्तिभि॒: सदा॑ नः ॥[3]
यजुर्वेद में तो शतरुद्रीय अध्याय पूर्णतया शिवस्तुति को समर्पित है-
नमस्ते रुद्र मन्यव उतो त इषवे नमः । बाहुभ्यामुत ते नमः ॥ १॥
या ते रुद्र शिवा तनूरघोराऽपापकाशिनी ।
तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभि चाकशीहि ॥ २॥

इत्यादि।

वेदों में सम्प्राप्त रुद्र देव के विकास के क्रम में विभिन्न ऐसे सूत्र दृष्टिगोचर होते हैं, जिनके आधार पर पौराणिक शिव से सम्बद्ध अनेक कथाएँ प्रचलित हुई हैं। शिव के गण, त्रिनेत्र, किरातों से शिव का सम्बन्ध, कैलास पर्वत पर निवास, हलाहल पान करना आदि विभिन्न कथाएँ वैदिक साहित्य के सन्दर्भों का ही विस्तार है।[4]

भारतीय संस्कृति के अनेक विद्वानों, पुरातत्वविदों और इतिहासज्ञों ने पौराणिक शैव संस्कृति के मूल में वैदिक रुद्र के साथ-साथ सिन्धु-सरस्वती सभ्यता में धार्मिक मान्यताओं को भी समान स्तर पर स्वीकृत किया है। सिन्धु सभ्यता में किसी एक विशिष्ट देवी की उपासना प्रचलित थी तथा साथ ही शिवोपासना का भी प्रचार था, यह विषय विभिन्न प्रमाणों से सिद्ध हो चुका है।

प्राचीन उपनिषदों में श्वेताश्वतरोपनिषद् शैव-धर्म की दृष्टि से विशेष महत्त्व रखता है। इसमें वर्णित रुद्र के स्वरूप से स्पष्ट हो जाता है कि इस उपनिषद् के समय तक रुद्र का उत्कर्ष पूर्णतया हो चुका था।[5] इस समय तक न केवल रुद्र जनसाधारण के देवता ही थे अपितु आर्यों के सर्वाधिक प्रगतिशील वर्गों के भी आराध्य बन चुके थे।

[3] ऋग्वेद, 7/46/1-4

[4] भारतीय संस्कृति, पृ-231, प्रीति प्रभा गोयल, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2004

[5] भारतीय संस्कृति, पृ-231, प्रीति प्रभा गोयल, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2004

लौकिक संस्कृत में विभिन्न सन्दर्भ

संस्कृत साहित्य में भी शैव धर्म के विकास के अनेक प्रसंग उपलब्ध होते हैं। पाणिनि की अष्टाध्यायी, रामायण, महाभारत, अर्थशास्त्र, बौद्ध-साहित्य आदि में भी शैव धर्म की उन्नति के अनेक सन्दर्भ प्राप्त होते हैं। अष्टाध्यायी लौकिक संस्कृत व्याकरण का आदि ग्रन्थ है, जिसके आधार 'माहेश्वर सूत्र' हैं-

नृत्तावसाने नटराजराजो ननाद ढक्कां नवपञ्चवारम्।
उद्धर्तुकामा सनकादिसिद्धानेतद्विमर्शे शिवसूत्रजालम्॥[6]

इसका अभिप्राय यह हुआ कि पाणिनि के समय तक यह माना जाने लगा कि मानव को भाषा का उपहार शिवकृपा से प्राप्त हुआ। ई.पू. द्वितीय शताब्दी में पतंजलि कृत महाभाष्य से महाभारत काल के विकसित शैव धर्म की पुष्टि होती है। शिव के अनेक नामों एवं सकन्द की मूर्तियों का भी वर्णन महाभाष्य में उपलब्ध होता है।[7]

रामायण में रुद्र नाम की अपेक्षा महेश्वर, शंकर, महादेव, त्र्यम्बक आदि नामों का अधिक प्रयोग उपलब्ध होता है, जो सदैव लोक कल्याण में प्रवृत्त हैं-

देव देव महादेव लोकस्यास्य हिते रतः।
सुराणां प्रणिपातेन प्रसादं कर्तुमर्हसि॥[8]

महाभारत में प्रायः सभी पर्वों में शिव-विषयक प्रसंग उपलब्ध होते हैं। वन-पर्व में अर्जुन की उत्कृष्ट तपस्या करने के बाद शिव से पाशुपत-अस्त्र प्राप्त करने का प्रसंग समुपलब्ध होता है।[9]

जिस प्रकार व्याकरण तन्त्र में पाणिनि शिवकृपान्वित स्वीकृत हैं, इसी प्रकार साहित्य तन्त्र, दर्शन तन्त्र, नाट्यशास्त्र आदि से सम्बन्धित अनेक आचार्यों की भी भगवान शिव के प्रति अपार श्रद्धा का वर्णन प्रायः किसी न किसी रूप में प्राप्त होता है, यथा-

साहित्य तन्त्र में कविकुलगुरु कालिदास भी शैव संस्कृति के पोषक प्रतीत होते हैं। ईसा की प्रथम चार शताब्दियों की शैवधर्म की विकास यात्रा कालिदास की विभिन्न कृतियों में दृष्टिगोचर होती है तथा वे अपनी कृतियों का आरम्भ प्रायः शिवस्तुति से आरम्भ करते हैं, जिसमें शिव-पार्वती, शिव को मंगलाचरण से स्तुत करते हैं, यथा-

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ॥[10]

उपरोक्त श्लोक में महाकवि कालिदास रघुवंश महाकाव्य की रचना से पूर्व परमेश्वर शिव एवं पार्वती को जगत् के माता-पिता के रूप में स्वीकार करते हैं तथा अपने काव्य रचना हेतु उनकी प्रार्थना कर रहे हैं।

[6] लघुसिद्धान्तकौमुदी, भूमिका, प्रो. सत्यपाल सिंह
[7] भारतीय संस्कृति, पृ-236, प्रीति प्रभा गोयल, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2004
[8] वाल्मीकि रामायण, 1/36/9
[9] महाभारत 03/03/87, 07/80,81
[10] रघुवंश महाकाव्य 1.1

या सृष्टिः स्रष्टुराद्या वहति विधिहुतं या हविर्या च होत्री
ये द्वे कालं विधत्तः श्रुतिविषयगुणा या स्थिता व्याप्य विश्वम्।
यामाहुः सर्वबीजप्रकृतिरिति यया प्राणिनः प्राणवन्तः
प्रत्यक्षाभिः प्रपन्नस्तनुभिरवतु वस्ताभिरष्टाभिरीशः॥[11]

प्रस्तुत मंगलपद्य में भी महाकवि कालिदास अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक की रचना से पूर्व भगवान् शिव की अष्टमूर्तियों की वन्दना करते हैं जो कि इस संसार का आधार रूप हैं।

साहित्य के अभिलेखों में प्रथम शती के बौद्ध महाकवि अश्वघोष की कृतियाँ द्रष्टव्य हैं। अश्वघोष द्वारा रचित बुद्धचरितम् महाकाव्य में शिव का अनेकशः उल्लेख प्राप्त होता है। प्रथम सर्ग के एक श्लोक में पार्वती को 'देवी' शब्द से प्रबोधित किया है जिनकी गोद में अग्निसूनु स्कन्द बैठे हैं – "**देव्यङ्कसंविष्टमिवाग्निसूनुम्**"। एक अन्य श्लोक में 'षण्मुख' के जन्म से प्रसन्न 'भव' (शिव) का उल्लेख प्राप्त होता है – '**भव इव षण्मुखजन्मना प्रतीतः**'।

इसी प्रकार आचार्य भरतमुनिकृत नाट्यशास्त्र में शिव 'नटराज' रूप में स्तुत है जहाँ ब्रह्म के साथ-साथ महेश्वर को नमस्कार किया गया है-

प्रणम्य शिरसा देवौ पितामहमहेश्वरौ।
नाट्यशास्त्रं प्रवक्ष्यामि ब्रह्मणा यदुदाहृतम्॥[12]

भारतीय दार्शनिक सम्प्रदायों में विभिन्न शैव-दर्शनों के उपास्य एवं ज्ञेय शिव है यथा – पाशुपत, प्रत्यभिज्ञा शैव आदि। इसके साथ ही अद्वैत-वेदान्त के आचार अथवा उपासना के विषय भी शिवरूप की स्वीकृति है। प्रसिद्ध आचार्य शब्दब्रह्मवादी (तन्त्र दर्शन के मर्मज्ञ) भर्तृहरि ने भी वाक्यपदीयम् में 'आगम' का वैशिष्ट्य निरूपित किया है –

प्रज्ञा विवेकं लभते भिन्नैरागमदर्शनैः।
कियद्वा शक्यमुन्नेतुं स्वतर्कमनुधावता॥[13]

इस प्रकार अनेक शास्त्रसम्प्रदायों के प्रतिष्ठित आचार्यों ने साधना की दृष्टि से भी शैव संस्कृति के आराध्य को आधार रूप में ग्रहण किया है, यथा- आचार्य शंकर, आचार्य अभिनवगुप्त, माधवाचार्य (विद्यारण्य स्वामी), म. म. पं. गोपीनाथ कविराज, स्वामी काशिकानन्द गिरि, आचार्य वागीश शास्त्री इत्यादि। इन सभी के आराध्यस्वरूप शिव की अर्चना शैव-संस्कृति की व्यापकता को इंगित करती है।

निष्कर्ष

आचार एवं ज्ञान की दृष्टि से शैव-संस्कृति का भारतीय संस्कृति में विशेष स्थान है जिसका निरूपण हमें प्रायः संस्कृत वाङ्मय में सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है। ज्योतर्लिंगों के सम्बन्ध में यह प्रमुख तथ्य है कि यह संस्कृति को देश की

[11] अभिज्ञानशाकुन्तल 1.1. कालिदास
[12] नाट्यशास्त्र, मंगलाचरण, भरत मुनि
[13] वाक्यपदीय, 2.489, भर्तृहरि

चारों दिशाओं को सांस्कृतिक आधार पर एक सूत्र में एकीकृत करते हैं। कश्मीर में शैव-धर्म के सिद्धान्तों का उच्चतम विकास हुआ है। इनके दार्शनिक विचारों में मौलिकता है और धार्मिक आचार-व्यवहार में कट्टरता एवं संकीर्णता के स्थान पर उदारता है।

भारतीय संस्कृति ने शिव के स्वरूप से सम्बन्धित सभी प्रतीकों का विद्या, संगीत, कला, शास्त्र, योग, शान्ति-प्रेम, सुदृढ प्रतिकार आदि रूप में ग्रहण किया है तथा शिवाचार को जीने का भी प्रयास किया जाता है। यथा- शिव-पार्वती को मांगलिक युगल स्वीकार किया जाता है। अर्धनारीश्वर की परिकल्पना स्त्री-पुरुष के ऐक्य को सूचित करती है जिसकी सम्प्रति सर्वाधिक प्रासंगिकता है। इसी प्रकार विभिन्न गणों का एकत्रित होकर रहना सौहार्द की व्यापक भावना को प्रदर्शित करता है। अतः यह सुस्पष्ट है कि शैव संस्कृति का भारतीय ज्ञान परम्परा में अन्तः सम्बन्ध है जिसे भारतीय जनमानस व्यावहारिक तन्त्र में भी आचरित करता है।

सन्दर्भग्रन्थ-सूच

[1] अभिज्ञानशाकुन्तलम्, कालिदास, (हिंदी अनुवाद एवं टीका सहित) राधावल्लभ त्रिपाठी (संपादक), साहित्य अकादमी, नई दिल्ली: 2006

[2] ऋग्वेद (हिंदी अनुवाद), गीता प्रेस संपादक मंडल, गोरखपुर: गीता प्रेस, 2004

[3] तन्त्रागमीय धर्म दर्शन, व्रजवल्लभद्विवेदी, शैवभारतीशोधप्रतिष्ठानम् डी. 35/77 जंगमवाड़ी मठ वाराणसी, सन्-2000

[4] नाट्यशास्त्र, भरत मुनि, (हिंदी अनुवाद एवं व्याख्या सहित) पंडित केदारनाथ शर्मा (संपादक), मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2005

[5] भारतीय संस्कृति, प्रीति प्रभा गोयल, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2004

[6] भारतीय साधना की धारा, कविराज गोपीनाथ, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, 2007

[7] महाभारत, वेदव्यास, पण्डित रामनारायणदत्त शास्त्री पाण्डेय (अनुवादक), गीताप्रेस गोरखपुर, वि. सं. 2070

[8] यजुर्वेद (हिंदी अनुवाद), गीता प्रेस संपादक मंडल, गीता प्रेस गोरखपुर, 2005

[9] रघुवंशम् (सरल हिंदी टीका सहित), हरिदत्त शर्मा (संपादक), मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1998

[10] वाक्यपदीयम्, भर्तृहरि, शिवशंकर अवस्थी (सम्पादक) , चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2013 ई.

[11] वाल्मीकि रामायण (व्याख्या सहित), रामनारायण दत्त शर्मा, (संपादक) वाराणसी: चौखम्बा विद्याभवन, 1998